ISSN 0973-8541, HUMANITIES AND DEVELOPMENT, VOL.20, No.3, July-Sept., 2025/7

वर्तमान सामाजिक परिवेश में परिवार की बदलती भूमिका

अजय कुमार सिंह एवं मनोज कुमार वत्स
https://doi.org/ 10.61410/had.v20i3.244

सारांश– परिवार मानव समाज की पूर्णतः मौलिक एवं सार्वभौमिक इकाई है। हम में से प्रत्येक किसी न किसी परिवार का सदस्य है। परिवार एक मात्र प्राकृतिक समूह है प्राणी शास्त्रीय सम्बन्धों के आधार पर बहुत से समूहों का निर्माण होता है। मानव का सम्पूर्ण जीवन समाज में व्यतीत होता है। समाज व्यक्ति को जन्म से लेकर मृत्यु तक प्रभावित करता है। परिवार के मूल में स्त्री–पुरूष है और समाज में परिवार की केन्द्रीय स्थिति होती है। वास्तव में परिवार समाज की आधार भूत इकाई है। परिवार से ही समाज का विस्तार हुआ है और उस पर ही प्रत्येक समाज का जीवित रहना निर्भर करता है। परिवार सन्तानोत्पत्ति द्वारा समाज के लिए नवीन सदस्यों की भर्ती करता है, जो मृत व्यक्तियों के रिक्त स्थान की पूर्ति करते रहते हैं और इस प्रकार की निरन्तरता बनाये रखते हैं।

शब्द कुंजी– समाज, परिवार, सांस्कृतिक, धार्मिक, जीवन, सम्बन्ध।

प्रस्तावना

भारत में परिवार–किसी भी समाज की संरचना को समझने के लिए परिवार की बुनियादी इकाई के रूप में देखा जाता है। परिवार के आधार पर ही किसी समाज में व्यक्तियों के पारस्परिक सम्बन्धों और व्यवहार के तरीकों को समझा जा सकता है। सच तो यह है कि समाज और संस्कृति की निरन्तरता को बनाये रखने में परिवार का योगदान सबसे अधिक होता है। इसी के द्वारा व्यक्ति की वे सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक एवं आर्थिक जरूरतें पूरी होती है। जो सभी समाजों में सार्वभौमिक हैं। बच्चे का समाजीकरण करने तथा अपने सदस्यों को सामाजिक और भावनात्मक सुरक्षा देने में भी परिवार का योगदान सबसे अधिक होता है।[1]

परिवार की परिभाषा विभिन्न समाजशास्त्रियों ने इसके आकार, बनावट और कार्यो के आधार पर दी है। मैकाइवर ने परिवार की व्याख्या एक छोटे और यौन सम्बन्धों पर आधारित उस समूह के रूप में की है, जिसमें बच्चों के पालन–पोषण और जन्म की व्यवस्था की जाती है। बर्जेस और लॉक के अनुसार, ''परिवार ऐसे व्यक्तियों का समूह है जो विवाह, रक्त या गोद लेने के सम्बन्धों द्वारा बंधे होते हैं एक छोटी सी गृहस्थी का निर्माण करते हैं तथा जिसमें एक सामान्य संस्कृति के अनुसार सदस्यों की देख–रेख की जाती है।''[2] विभिन्न समुदायों में परिवार के संगठन में कुछ भिन्नता होने के बाद भी इसकी प्रमुख विशेषताएं काफी कुछ समान देखने को मिलती है। सार्वभौमिकता, सीमित परिवार, सदस्यों में भावनात्मक सम्बन्ध, एक–दूसरे पर रचनात्मक प्रमुख, बच्चों का समाजीकरण तथा पालन–पोषण इसकी प्रमुख विशेषताएं है।

परिवार का महत्व इसी तथ्य में समझा जा सकता है कि हम में से कोई भी व्यक्ति ऐसा नहीं होता है जो किसी परिवार का सदस्य न हो। इसे स्पष्ट करते हुये एण्डरसन ने लिखा है कि ''परिवार का एक रूप वह है जिसमें हम जन्म लेते हैं और दूसरा रूप वह है जिसमें हम स्वयं बच्चों को जन्म

- शोध छात्र – एम0ए0 समाजशास्त्र, नेट
- शोध निर्देशक – अध्यक्ष समाजशास्त्र विभाग, राजा श्रीकृष्ण दत्त स्नातकोत्तर महाविद्यालय, जौनपुर

देते हैं। ऐसा कोई व्यक्ति नहीं है जो परिवार के इन दोनों रूपों में से किसी का भी सदस्य न हो।'' मैकाइवर तथा पेज ने इन दोनों तरह के परिवारों को ''जन्म लेने का परिवार'' तथा ''प्रजनन का परिवार'' कहा है।

विभिन्न समाजों में सभी परिवारों की प्रकृति एक जैसी नहीं होती है। एक सामान्य वर्गीकरण के रूप में समाजशास्त्रीयों ने परिवार के तीन मुख्य प्रकारों का उल्लेख किया है। इन्हें हम मूल परिवार, विस्तृत परिवार तथा संयुक्त परिवार कहते हैं। इस दशा में यह जरूरी है कि परिवार के इन प्रकारों के अर्थव्यवस्था उनकी विशेषताओं को समझा जाएं।

क– मूल अथवा केन्द्रक परिवार–

इन्हें एकाकी परिवार भी कहा जाता है। ऐसे परिवार आकार में बहुत छोटे होते हैं क्योंकि इनका निर्माण पति–पत्नी तथा उनके अविवाहित बच्चों से ही होता है। जैसे ही व्यक्ति के किसी पुत्र या पुत्री का विवाह हो जाता है, उसका एक अलग परिवार स्थापित हो जाता है। नगरीय परिवार तथा पश्चिमी देशों के अधिकांश परिवार इसी तरह के होते हैं। मूल परिवार को परिभाषित करते हुये ऑगबर्न तथा निमकॉफ ने लिखा है, ''परिवार बच्चों अथवा बिना बच्चों वाले पति–पत्नी अथवा किसी पुरूष या स्त्री के साथ रहने वाली उनकी संतानों का एक स्थायी संगठन है।'' मैकाइवर तथा पेज ने भी परिवार की संक्षिप्त परिभाषा देते हुये लिखा है, ''परिवार वह छोटा और शक्तिशाली समूह है जो यौन सम्बन्धों पर आश्रित होता है तथा संतान के जन्म और पालन–पोषण की व्यवस्था करता है।'' मूल परिवार की इस प्रकृति को स्पष्ट करने के लिए मैकाइवर तथा पेज ने इसकी निम्नांकित आठ विशेषताओं का उल्लेख किया है।[3]

1– सार्वभौमिकता–

सामाजिक विकास के विभिन्न स्तरों पर परिवार सभी समाजों में पाया जाता रहा है। प्रत्येक व्यक्ति जन्म लेने से परिवार या जन्म देने के परिवार में से किसी एक का सदस्य अवश्य होता हैं। इसका कारण परिवार द्वारा ही सभी सदस्यों की मौलिक आवश्यकताओं को पूरा करना है।

2– भावनात्मक आधार–

परिवार के सभी सदस्य भावनात्मक आधार पर एक–दूसरे से बंधे रहते हैं। सदस्यों का पारस्परिक त्याग, स्नेह की भावना, बच्चों के पालन–पोषण की व्यवस्था, सामाजिक और आर्थिक सुरक्षा तथा मिल–जुलकर कार्य करने से परिवार का भावनात्मक आधार बहुत प्रभावपूर्ण बन जाता है।

3– रचनात्मक प्रभाव–

परिवार की प्रकृति इसलिए रचनात्मक होती है कि इसी के द्वारा बच्चों का समाजीकरण होता है तथा परिवार का उद्देश्य प्रत्येक सदस्य के हित में काम करना होता है।

4– छोटा आकार–

दूसरे समूहों की तुलना में परिवार बहुत छोटा समूह है। इसके सदस्य केवल वही व्यक्ति होते हैं। जिन्होंने इसमें जन्म लिया हो अथवा विवाह सम्बन्धों के द्वारा इसमें सम्मिलित हुये हों।

5– सामाजिक ढांचे में केन्द्रीय स्थिति–

परिवार का संगठन ही किसी समाज के ढांचे का वास्तविक आधार होता है। परिवारों के संगठन के अनुसार ही सामाजिक ढांचा भी बदलने लगता है।

6– सदस्यों के असीमित दायित्व–

परिवार एक ऐसा समूह है जिसमें व्यक्ति उन सभी दायित्वों को पूरा करता है जो उसकी योग्यता और क्षमता के अनुकूल होते है। ऐसे दायित्व पारस्परिक त्याग और सहयोग के द्वारा पूरे किये जाते हैं।

7– सामाजिक नियमन–

समाज को नियमबद्ध बनाएं रखने के लिए कुछ विशेष आदर्श नियमों रीति–रिवाजों, शिष्टाचार के तरीकों तथा सम्बन्धों का विशेष महत्व होता है। परिवार द्वारा इन सभी का पालन नियमबद्ध रूप से करने पर बल दिया जाता है।

8– परिवार का स्थायी व अस्थायी स्वभाव–

परिवार की प्रकृति स्थायी होने के साथ ही इसका रूप अस्थायी भी होता है। पति–पत्नी के बीच विवाह–विच्छेद, परिवार के किसी सदस्य की मृत्यु होना या किसी नये सदस्य का जन्म होना तथा विवाह के द्वारा परिवार में किसी नये सदस्य का प्रवेश करना वे दशाएं हैं जो परिवार में पैदा होने वाले परिवर्तन को स्पष्ट करती हैं।[4]

ख– विस्तारित परिवार–

इन्हें विस्तृत परिवार भी कहा जाता है। ऐसे परिवार की प्रकृति मूल परिवार से भिन्न होती हैं। विस्तारित परिवार वह है जिसमें एक दम्पत्ति की अविवाहित संतानों के साथ उसके विवाहित पुत्र की पत्नी और उनके बच्चों का भी समावेश होता है। इस प्रकार इन परिवारों में साधारणतया तीन पीढ़ी के सदस्य साथ–साथ रहते हैं। भारत के नगरीय क्षेत्रों तथा अधिकांश जनजातियों में इसी तरह के परिवारों का प्रचलन है।

परिवार के इस रूप को स्पष्ट करते हुये बर्गेस और लॉक का कथन है, ''परिवार ऐसे व्यक्तियों का समूह है जो रक्त विवाह अथवा गोद लेने के सम्बन्धों द्वारा संगठित होता है। एक छोटी सी गृहस्थी का निर्माण करता है तथा एक सामान्य संस्कृति के अन्तर्गत सदस्यों की देख–रेख करता है।'' स्पष्ट है कि यदि किसी दम्पत्ति के कोई सन्तान न हो तो गोद लिये गये बच्चे तथा कुछ समय बाद बड़े होने पर उसकी पत्नी व बच्चों को भी विस्तारित परिवार में सम्मिलित किया जाता है।

ग– संयुक्त परिवार–

अनेक कम विकसित और परम्परागत समाजों में परिवारों का रूप संयुक्त परिवार के रूप में देखने को मिलता है। संयुक्त परिवार का सबसे स्पष्ट रूप भारतीय समाज की परम्परा में देखने को मिलता है। इसकी विस्तृत विवेचना हम आगे करेंगे। यहां पर समझना जरूरी है कि विस्तृत और संयुक्त परिवार में अन्तर क्या है? विस्तृत परिवार से भिन्न, संयुक्त परिवार वह होता है जिसमें

तीन–चार पीढ़ियों के सभी सदस्य एक ही घर में संयुक्त रूप से रहते हैं तथा सभी के द्वारा उपार्जित आय से एक ऐसे संयुक्त कोष को बनाएं रखा जाता है जिसके द्वारा सभी सदस्यों की आवश्यकताओं को पूरा किया जा सके। इससे स्पष्ट होता है कि विस्तृत और संयुक्त परिवार में तीन अन्तर मुख्य है–

1. विस्तारित परिवार वह है जिसमें कभी दम्पत्ति की अविवाहित सन्ताने तथा केवल एक पुत्र की पत्नी और उसकी सन्तानों का समावेश होता है। संयुक्त परिवार में एक पूर्वज के सभी विवाहित पुत्रों और उनकी आगामी तीन पीढ़ियों तक के सभी सदस्य साथ–साथ रहते हैं।
2. विस्तारित परिवार में एक व्यक्ति तथा विवाहित पुत्र को अपनी आय का इच्छानुसार उपयोग करने की स्वतंत्रता रहती है जबकि संयुक्त परिवार को कोई भी सदस्य मुखिया की इच्छा के बिना अपनी आय का उपयोग नहीं कर सकता।
3. आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक क्षेत्र में विस्तारित परिवार के सदस्य व्यवहार के क्षेत्र में स्वतंत्र रहते है। इससे भिन्न संयुक्त परिवार के प्रत्येक सदस्य को परिवार के मुखिया के आदेशों के अनुसार व्यवहार करना आवश्यक होता है।[5]

निष्कर्ष–

परिवार एक सार्वभौमिक संस्था है और प्रत्येक समय में यह समाज में विद्यमान रहा है पशु अवस्था से ही समाज में परिवार को देखा गया है किन्तु वर्तमान समय में औद्योगीकरण, नगरीकरण और सोशल मीडिया के बढ़ते साधनों के परिणामस्वरूप परिवार की संरचना में काफी बदलाव आया है।

संदर्भ सूची

1. आहूजा रामः भारतीय सामाजिक व्यवस्था, रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर 5वां संस्करण, 2008, पृ0 19–20
2. दूबे, एस0सी0ः ''मानव और संस्कृति'', पृ0 113
3. अग्रवाल जी0के0, समाजशास्त्र, विवेक प्रकाशन, जवाहर नगर दिल्ली–7, पृ0 67–73
4. आहूजा, डी0 बॉब रोशन एवं स्टिनसन एम0कंडीः ''महिला शीर्षक एकल अभिभावक परिवार पारिवारिक निर्णय लेने में बच्चां के प्रभाव का अन्वेषण अध्ययन'', उपभोक्ता अनुसंधान, वाल्यूम 20, 1993, पृ0 459–474
5. हिल्टन, एम0जैनी व डैविल एल0एस्थरः ''एकल माँ, एकल पिता में पेरेटिंग और बच्चों के व्यवहार की तुलना और अक्षुण्ण परिवार'', तलाक और पुनर्विवाह के जर्नल, खण्ड 29, 12 अक्टूबर 2008, पृ0 23–54